6

गणित सीखना-सिखाना*

प्राथमिक शालाओं में गणित सीखने की प्रक्रिया की शुरुआत बच्चों के ही अनुभवों से जुड़ी और उन पर आधारित होनी चाहिए। बिना समझे गणित के सवालों को हल करना, अंधेरे में भटकने के समान है। अत: मूल तत्वों को समझकर ही हम निष्कर्ष तक पहुँच सकते है। गणित सीखने और सिखाने में किन-किन बातों का ध्यान रखना चाहिए। इस आलेख में प्रस्तुत किया गया है।

रोज़ का गणित और उससे आगे

गणित में आमतौर पर दो तरह के बौद्धिक कौशलों का विकास, अपेक्षित होता है, 1. संख्याओं से संबंधित कौशल जैसे, गिनना, जोड़ना, घटाना, गुणा करना, भाग देना, भिन्न, दशमलव, स्थानीय मान की क्रियाएँ करना आदि। इन कौशलों के दैनिक जीवन में उपयोग की क्षमता भी अपेक्षित है। जगह, या अँग्रेज़ी में कहें तो स्पेस संबंधित कौशल, जो आकृति, रेखा, तल, जैसी अवधारणाओं से संबंधित हैं व दूरी, क्षेत्रफल, आयतन जैसे आयामों के मापन से संबंधित हैं।

गणित सीखने की शुरुआत स्कूल पहुँचने के पहले से ही हो जाती है। अधिकांश बच्चों को बचपन से ही विशेष संदर्भ में थोड़ा बहुत गिनना आता है। विशेष संदर्भों में वे कुछ-कुछ जोड़ और घटा भी सकते हैं। इसी प्रकार घर में चीज़ों को जमाने में, उड़ेलने में, भरने में, बच्चा 'जगह' का अहसास करता है। यानी गिनती से संबंधित या संख्या से संबंधित क्रियाएँ और जगहों से संबंधित कई अनुभव बच्चे को होते हैं। ऐसी बहुत-सी क्रियाएँ उसने की होती हैं या देखी होती हैं। आप खुद इस तरह के अनुभवों के कई उदाहरण ढूंढ सकते हैं।

यही अनुभव बच्चे के सीखने की बुनियाद बन सकते हैं। इन अनुभवों के प्रति शिक्षक के सचेत रहने से सीखने की प्रक्रिया सरल हो सकती है क्योंकि शिक्षक की मदद से बच्चा अपने सोचने के तरीके में नए अनुभव व नयी बातें जोड़ सकता है या नयी जानकारी के

* *एकलव्य*, भोपाल द्वारा प्रकाशित पुस्तक *सीखना-सिखाना* से साभार

आधार पर अपनी सोच का ढाँचा बदल सकता है ऐसा न होने से कक्षा में किया गया गणित और घर का बाज़ार में किया गया गणित और घर या बाज़ार में किया गया हिसाब बच्चे की सोच में बिलकुल अलग हो जाते हैं। इससे उसकी क्षमता दोनों ही स्थानों पर अधूरी व अपर्याप्त रह सकती है।

इन सबसे कुछ स्वाभाविक निष्कर्ष निकलते हैं –

1. प्राथमिक शालाओं में गणित सीखने की प्रक्रिया की शुरुआत बच्चों के ही अनुभवों से जुड़ी और उन पर आधारित होनी चाहिए।
2. इसके लिए पहली आवश्यकता तो यह होगी कि बच्चों के इन अनुभवों को और ज़्यादा समृद्ध और पैना बनाने की कोशिश हो।
3. इसे करने के लिए शिक्षक कक्षा में और पालक घर में कई ऐसी गतिविधियाँ कर सकते हैं जिनमें बच्चों को नापना पड़े, जोड़ना, घटाना और गुणा करना पड़े, जगह घेरने के अभ्यास करने पड़ें। जो भी कुछ बच्चे ने किया और उस पर वह सोचे व औरों को समझाएँ। एक अनुभव से गुज़र कर उस पर सोचने से ही सीखने की प्रक्रिया आगे बढ़ती है।
4. बच्चों को नए-नए सवाल दिए जाएँ और उन्हें अपना तरीका विकसित करने का मौका मिले। यह भी माना जाना चाहिए कि गणित की अवधारणाएँ (बहुत-सी अन्य अवधारणाएँ भी) मुफ़्त में नहीं सीखी जा सकतीं। एक ही बात को ठोक-ठोक कर पढ़ाएँ जाने और फ़िर उस अवधारणा को भूल जाने से बहुत-से बच्चे नहीं सीख पाते। इसलिए गणित सीखने में ज़रूरी है कि प्रत्येक अवधारणा को भिन्न-भिन्न अंतराल में कई बार दोहराया जाए। अभ्यास के लिए ऐसी गतिविधियाँ हों जो उसे सक्रिय बनाएँ और जो उसकी रुचि की हो। इसके लिए ज़रूरी है कि बच्चा अपनी बात को, सोचने के ढंग को, और तार्किक ढाँचे को समझाए, जिसके लिए उसे सहानुभूति व धैर्यपूर्ण श्रोता मिले और आगे दिशा दिखाने के लिए गुरू भी।

वर्तमान में गणित शिक्षण –

1. सामान्य पाठ्यक्रम विभिन्न कौशलों के सिर्फ़ कुछ ही पहलुओं पर ध्यान देता है। कुछ विशेष कौशल सामान्य पाठ्यक्रम में छूट जाते हैं। उदाहरण के लिए सामान्य पाठ्यक्रम सिर्फ़ गिनती सुनाने, जोड़ करने, घटाने, गुणा करने, भाग देने तक ही सीमित हो जाता है। गिनती व संख्या का एहसास जैसी बातें और 'जगह की समझ' जैसे मसले छूट ही जाते हैं।
2. इसमें अधिक-से-अधिक इतनी ही अपेक्षा रहती है कि बच्चा सवाल के स्वरूप को देखकर आवश्यक सूत्र का उपयोग करते हुए उसे हल करे।
3. सीखने में भी ज़्यादा ज़ोर केवल उत्तर तक पहुँचने पर ही रहता है।
4. उत्तर तक पहुँचने के लिए समझने की प्रक्रिया पर ज़ोर नहीं बल्कि पहाड़े रटने विभिन्न सूत्र और विधियाँ याद रखने पर रहता है।

5. पढ़ाने का तरीका यह होता है कि हर सूत्र या विधि का बार-बार अभ्यास कराया जाए और परीक्षा में भी इस बात का आकलन किया जाता है कि बच्चे को सूत्र या विधि याद है या नहीं।

सूत्रों और कलनों में दिक्कत क्यों है?

सूत्रों को याद या सवालों को हल करवाने के इस तरह के प्रयासों के पीछे शायद यह समझ है कि एक सूत्र का बार-बार प्रयोग करने से धीरे-धीरे समझ में आने लगता है। अभ्यास के लिए सवालों का चुनाव भी ढंग का होता है और एक ही सूत्र को अलग-अलग परिस्थितियों में बार-बार दोहराया जाता है। इसी वज़ह से कुछ अपेक्षाकृत अच्छी पुस्तकों में हर सूत्र या विधि से एक प्रकार के अभ्यास के पहले कुछ हल किए हुए उदाहरण रहते हैं। ये उदाहरण ऐसे होते हैं जिनमें सूत्र का अलग-अलग परिस्थितियों में उपयोग होता है। फ़िर इन्हीं के आधार पर बच्चों को आगे के अभ्यास करने होते हैं।

जैसे, साधारण ब्याज का सूत्र –

$$\text{साधारण ब्याज} = \frac{\text{मूलधन} \times \text{दर} \times \text{समय}}{100}$$

$$\text{दर} = \frac{\text{ब्याज} \times 100}{\text{मूलधन} \times \text{समय}}$$

इसी तरह से समय, चक्रवृद्धि ब्याज व लघुत्तम आदि के कलन भी होते हैं। सोचिए कि इन कलनों का आधार क्या है? यदि आप यह नहीं बता सकते तो आप पूरी तरह से न तो वर्गमूल समझ पाएँगे और न ही ब्याज। क्योंकि किसी नयी परिस्थिति में जहाँ सूत्र सीधे-सीधे उपयोग नहीं होता है वहाँ आपको यह समझ में नहीं आएगा कि क्या करना चाहिए। सीखने का एक उद्देश्य यह हो सकता है कि हर संभव परिस्थिति के लिए सूत्र याद रखे जाएँ। दूसरे, तरफ़ अवधारणाओं के सहारे हर परिस्थिति का विश्लेषण करने की क्षमता को बढ़ाने का उद्देश्य महत्त्वपूर्ण माना जा सकता है।

समझ के बिना गणित करना

बच्चे भी जब जोड़-घटा, गुणा-भाग करते हैं तो एक के नीचे दूसरी संख्या लिखकर क्रम से जोड़ तो लेते है किंतु जोड़ का अर्थ क्या है, कब जोड़ना है व कब नहीं, यह तय नहीं कर पाते। वे भिन्न में भी ऊपर नीचे की संख्या को क्रम से जोड़ डालते हैं।

सूत्रों के अभ्यास और सूत्र याद करने की प्रक्रिया से अधिकांश बच्चे तो कुछ भी नहीं सीख पाते। किंतु थोड़े बहुत बच्चे सीख भी जाते हैं। यह बता पाना मुश्किल है कि इन बच्चों के सीखने की प्रक्रिया क्या होती है, यानि ये बच्चे सवाल क्यों हल कर पाते हैं? इसके बारे में सिर्फ़ कुछ संभव कारण सोचे जा सकते हैं। जैसे शायद यह कहा जा सकता है कि विविध उदाहरणों को देखने और हल करने की कोशिश के बाद ये बच्चे सभी प्रकार के सवालों को अलग-अलग समझने लगते हैं। वे सवालों के अनुसार, कलन या विधि को फ़िट करना समझ लेते हैं। किंतु इनमें से बहुत-से बच्चे वास्तव में यह नहीं समझते कि वे क्या कर रहे हैं और क्यों। जैसे गुणा या भाग का निशान देखकर गुणा और भाग तो दे सकते हैं

लेकिन यह नहीं समझ सकते कि वे ऐसा क्यों कर रहे हैं। इस अधूरी क्षमता के कई और भी उदाहरण हैं। विभिन्न नए प्रकार के सवालों से जूझ पाने की क्षमता बच्चों में काफ़ी कम होती है। सोचकर हल करने वाले सवालों में बच्चे असहाय हो जाते हैं।

पाँचवीं के बहुत से बच्चे 10–6 = 4 तो कर लेंगे लेकिन 10 – ? = 8 नहीं कर सकते। दूसरे सवाल में उन्हें सिर्फ़ कलन ही फ़िट नहीं करना बल्कि जोड़–घटाने के अर्थ की समझ का उपयोग भी करना है। जैसे–जैसे बच्चा बड़ा होता है यह दिक्कत बढ़ती जाती है। शुरू में तो बच्चों को एक–दो कलनों से जूझना होता है और तब वे यांत्रिक ढंग से इनसे संबंधित सवाल कर लेते हैं। ऐसा लगता है कि जैसे–जैसे उन्हें ज़्यादा कलन याद रखने की कोशिश करनी पड़ती है वैसे–वैसे उन्हें व्यवस्थित रूप से दिमाग में रखना संभव नहीं रहता। बच्चे इन कलनों का उपयोग करते समय विभिन्न कलनों में उलझते जाते है और जोड़ की जगह गुणा या फ़िर किसी अन्य परिस्थिति से संबंधित सूत्र या बिलकुल और ही कुछ करने लग जाते हैं। सारी क्रियाएँ और सारे कलन गड्ड–मड्ड हो जाते हैं।

यहाँ कलन शब्द का प्रयोग तरीके, सूत्र, प्रक्रिया, विशेष ढंग, शॉर्ट–कट, नियम आदि के अलग–अलग प्रकार के मिश्रणों के लिए उपयोग किया गया है, जैसे जोड़ करते समय संख्याओं को एक के नीचे एक लिखते हैं या भिन्नों के गुणा के सवाल हल करते समय हर को हर से और अंश को अंश से गुणा कर देते हैं। भिन्न से भाग देते समय भिन्न को उलट कर गुणा कर देने से काम चल जाता है, आदि–आदि। ये सब कलन के उदाहरण हैं।

इस तरह से एक सामान्य दिक्कत जो बहुत से बच्चों को प्रभावित करती है, उसे कलनों का अटकलपंजू ढंग या तुक्के से इस्तेमाल कहा जा सकता है। बच्चों की उत्तर पुस्तिकाएँ देखने पर यह स्पष्ट दिखता है कि मानों वे कलनों के जंजाल में उलझ गए हों। भिन्न का जोड़ करते–करते वे स्तंभों को जोड़ देते हैं या फ़िर वे लघुत्तम लेने की प्रक्रिया में बनने वाले अंकों के पैटर्न की व्यवस्था जैसा चित्र बनाने की कोशिश करते हैं। किंतु उनके चित्र में कोई भी अंक कहीं भी लिखा हो सकता है। उनकी कोशिश सिर्फ़ उस जैसी दिखने वाली अंक व्यवस्था बनाने की होती है।

इस तरीके में यदि बच्चा सीख नहीं पाता तो मेहनती शिक्षक उसे उसी तरह के कुछ और उदाहरण करवाने की कोशिश करते हैं। अभी भी सूत्र की समझ पर ज़ोर कम ही होता है, ध्यान सवालों को हल करवाने पर ही दिया जाता है। (यह भी नहीं है कि सभी शालाओं में शिक्षकों द्वारा इतना सब भी करवाया जाता हो। सामान्य तौर पर तो किताबों के उदाहरण हल करके आगे बढ़ जाता है।)

सीखने की शुरुआत और मूल तत्वों की भूमिका

गणित सिखाने का एक दूसरा तरीका खोजा और प्रयोग किया गया। उसमें यह माना जाता है कि जब तक बच्चों को गणित विषय के मूल

तत्वों की जानकारी और उनकी परिभाषाएँ याद नहीं होंगी तब तक उन्हें आगे की चीज़ें समझ में नहीं आएँगी। इस विचार में मूल तत्व वाली अवधारणाओं की अमूर्तता का ध्यान नहीं रखा जाता और न ही बच्चों की रुचि, उनके समझने के ढंग व मिलान क्षमता का। मूल बातें विषय के अवधारणात्मक ढाँचे के आधार पर तय की जाती हैं। उदाहरण के लिए माना जाता है कि ज्यामिति सीखने के लिए जब तक बच्चा यह नहीं जानता कि बिंदु क्या है और फ़िर सरल रेखा क्या, तब तक वह नहीं समझ पाएगा कि आयत, त्रिभुज और कोण क्या है। फ़िर जब तक वह आयत, त्रिभुज व कोण नहीं जानेगा तब तक आकृतियों में विविधता और आस-पास की जगह को नहीं समझ पाएगा। इसलिए शिक्षण के इस तरीके में ज़ोर बुनियादी नियम एवं सिद्धांत सिखाने और अमूर्तिकरण पर है। ज़ोर इस बात पर नहीं है कि बच्चे ये सब शुरू में ही समझ पाएँ। महत्वपूर्ण बात यह मानी गयी है कि वे इसे याद कर लें और यथासंभव थोड़ा बहुत समझ लें। जैसे-जैसे वे और गणित सीखेंगे, अलग-अलग संदर्भों में उनका उपयोग करेंगे, वैसे-वैसे ये बातें उन्हें ज्यादा समझ में आती रहेंगी। किंतु शुरुआत में ही इन बातों से परिचय और इनको समझने का प्रयास आवश्यक है क्योंकि गणित के ढाँचे की अवधारणात्मक बुनियाद शुरू करके और उससे जूझकर ही बच्चे गणित सीख सकते हैं।

गणित सीखना क्या है?

गणित सीखने के उपरोक्त परिप्रेक्ष्य में बच्चों के समझने के तरीके की स्वाभाविक और विशिष्ट प्रक्रियाओं का कोई स्थान नहीं होता है। बच्चों की परिकल्पनाओं और उनकी सोच के समावेश के लिए कोई जगह नहीं दिखती है। किसी भी चीज़ को सीखने के लिए हमें अपनी स्थिति, अपनी सोच के स्तर को शुरू से आगे बढ़ाना होगा और किसी दूसरे के द्वारा बनाए सुव्यवस्थित या तार्किक सोच को रटकर अथवा बिना समझे अपनाकर बात को समझा नहीं जा सकता। किसी चीज़ को सीखने के लिए सीखने वाले की कम-से-कम मानसिक सक्रियता तो ज़रूरी ही है। इसके लिए कक्षा में बच्चे की अभिव्यक्ति और उसकी क्रियाशीलता का महत्त्व है। उसे अपने ढाँचे को अभिव्यक्त कर उसमें परिवर्तन करते-करते ऐसा ढाँचा बनाना है जो ज्यादा व्यापक हो और ज़्यादा परिस्थितियों में इस्तेमाल किया जा सके।

एक बात स्पष्ट है-हम उन्हीं परिस्थितियों में क्रियाशील हो पाएँगे या सोच पाएँगे जो हमारे लिए रोचक हों या महत्वपूर्ण हों। इसलिए ज़रूरी है कि कक्षा में ऐसी गतिविधियाँ हों जिनमें रोचकता का अहसास हो, जिनमें कुछ करना पड़े और करने के बाद सोचना, समझना और समझाना पड़े। ऐसा माहौल हो जिसमें सभी क्रियाओं को विविध प्रकार से दुबारा किया जा सके और तब तक किया जा सके जब तक हमारे निष्कर्ष हमें समझ में न आने लग जाएँ। यह आवश्यक है कि करने के मौके बार-बार मिलें और समय के कुछ अंतराल के बाद मिलें। सवाल हल करने के दबाव और डर के बिना स्वाभाविक तौर पर गणित की क्रियाएँ करने के मौके हों।

ठोस वस्तुओं के आधार पर गणित सिखाना

बच्चे ठोस वस्तुओं के साथ क्रिया करके सीखने की शुरुआत करते हैं। चीज़ें उठाते हैं, पटकते हैं, सूंघते हैं, ठोकते-बजाते हैं। ठोस वस्तुओं के साथ ये सब अनुभव बच्चों की रुचि के होते हैं।

इसलिए कक्षा में गणित सीखने की शुरुआत ठोस वस्तुओं से हो सकती है। शुरू में कुछ इस तरह की बातें की जा सकती हैं कि बच्चे तरह-तरह की चीज़ों को इकट्ठा करें, उनसे खेलें, परीक्षण करें और उनसे कुछ व्यवस्थित क्रिया करें। ऐसी क्रियाएँ जिनमें उन्हें सोचना पड़े और वस्तु का ज़्यादा बारीक अवलोकन करना पड़े। इन क्रियाओं को इस प्रकार बनाया जा सकता है कि इनमें मज़ा आए, इनमें खेल का, चुनौती का, भागीदारी का अहसास हो।

ऐसी गतिविधियों के कुछ उदाहरण– वस्तुओं को अलग-अलग आधारों पर छाँटना (रंग, आकार, उपयोग, बनावट, पदार्थ, आदि), छोटे-बड़े क्रम में जमाना, पहले-बाद के क्रम में समझना, एक-एक संगति करके जोड़ियाँ बनाना, चीज़ों को जमाकर कल्पनात्मक घर, गाँव, बैलगाड़ी, स्कूल आदि के मॉडल बनाना।

इसके बाद चित्रों का उपयोग किया जा सकता है। किंतु चित्रों का उपयोग करने में यह बात ध्यान देने की है कि बच्चे स्वत: और शुरू से ही चित्र नहीं समझ सकते। उन्हें चित्र समझने की क्षमता भी हासिल करनी होती है। इस क्षमता के लिए चित्रों को समझने, पढ़ने और इस्तेमाल करने की कोशिश ज़रूरी है। ठोस वस्तुओं से चित्रों के उपयोग की ओर बढ़ना अपेक्षाकृत अमूर्त स्तर की ओर कदम बढ़ाना है क्योंकि जिस तरह से ठोस वस्तुओं को हाथ में लेकर टटोला, परखा, हटाया, घुमाया जा सकता है, वह चित्र में दर्शायी वस्तुओं के साथ संभव नहीं है। इसलिए मौखिक भाषा के विकास में चित्रों के उपयोग और भूमिका की चर्चा महत्वपूर्ण हो जाती है। बच्चे जो भी क्रिया कर रहे हों उस पर उनसे बातचीत करना, उसके बारे में उनका सोचना, धैर्य से सुनना ज़रूरी है।

सामान्य खेलों व चर्चा में गणित

चर्चा के माध्यम से भी गणित के विभिन्न पहलुओं को उभारा जा सकता है। जैसे कक्षा के कमरे पर चर्चा करते हुए पूछना कि सबसे बड़ी खिड़की किधर है, दरवाजे के कितने पल्ले हैं, ऊपर क्या टंका हुआ है?

कहानी, कविता या चित्रों से उभरती हुई चर्चा में भी इसी तरह के सवाल हो सकते हैं-चित्र में सबसे बड़ा जानवर कौन-सा है? तीन गायें दिख रही हैं तो कितने सींग होंगे? ऐसे ही, खेल में गेंद के टप्पे गिनना जैसे प्रयास करवाए जा सकते हैं।

ठोस क्रियाओं से अमूर्त समझ तक

जिस प्रकार भाषा सीखने के संदर्भ में यह बात मानी जाती है कि ठोस वस्तुओं और चित्रों से गतिविधियाँ करने के बाद बच्चे लिखित रूप से प्रतीकों या चिह्नों की पहचान कर उनसे क्रियाएँ करना सीखते हैं, उसी प्रकार गणित सीखने की प्रक्रिया धीरे-धीरे अमूर्त अवधारणाओं की ओर बढ़ती है। अगर हम गिनती को ही लें तो तीन नाम की संख्या का परिचय पहले

वस्तुओं और चित्रों के माध्यम से होगा। लेकिन तीन की संख्या का अर्थ या अस्तित्व अपने आप में अलग से ही है। तीन पत्थर भी हो सकते हैं, तीन भगवान के अवतार, तीन पहाड़, तीन सेनाएँ, तीन आदमी हो सकते हैं, यानि किन्हीं भी वस्तुओं को तीन के समूह में रखा जा सकता है। इस प्रकार तीन अपने आप में एक और अलग अमूर्त अवधारणा है। उसे समझने के लिए गिनती के आधारों को समझना ज़रूरी है। इनमें से प्रमुख हैं, क्रम की अवधारणा, एक-से-एक संगति, गिनती क्रम में संख्याओं के नाम, गिनती क्रम में संख्याओं का हर बार एक-एक करके ही आगे बढ़ना आदि। इसी प्रकार चाहे हम गुणा करने की शुरुआत ठोस वस्तुओं और चित्रों से क्यों न करें अतंत: बच्चों को उसकी अवधारणा ज़रूर समझ में आनी चाहिए यानि संख्याओं के बीच किस तरह के संबंधों पर गुणा की प्रक्रिया आधारित है? जैसे, गुणा का मतलब है- एक ही संख्या को बार-बार जोड़ना, इसमें यह समझना ज़रूरी हो जाता है कि कौन-सी संख्या कितनी बार जोड़ी जा रही है। इस बात को समझने से गुणा के बारे में और बहुत-सी बातें समझना संभव हो जाता है। तब, इससे संबंधित नियमों और अलग-अलग संख्याओं के गुणा को रटना नहीं पड़ता।

एक उदाहरण देखें : $3 \times 4 = 3 + 3 + 3 + 3$

या $4 + 4 + 4$

यानि, $3 \times 4 = 4 \times 3 = 12$

इस प्रकार जब हम विशेष संदर्भ से बढ़कर अवधारणा समझने की बात करते हैं तो बच्चों को गणित की अमूर्तता की ओर ले जाने की बात करते हैं। अमूर्तता सिर्फ़ अपने आप में ज़रूरी नहीं है। उसकी आवश्यकता इसलिए होती है कि इस समझी हुई अमूर्त अवधारणा का उपयोग किसी भी संदर्भ में किया जा सके। अन्य स्थितियों में, आगे की कक्षाओं में इस ग्रहण किए गए सूत्र की समझ से मदद ली जा सके।

सीखने का क्रम

गिनती सिखाने में यह मानना कि बच्चे को पहले एक-से-एक संगति सीखनी चाहिए। उसी का अभ्यास करवाते रहना और यह सोचना कि जब तक उसमें दक्षता हासिल नहीं होती आगे नहीं बढ़ेंगे, गलत होगा। इसी तरह से हमें यह भी नहीं सोचना चाहिए कि गुणा और जोड़ के संबंध की मूल बातें समझाए बिना हम आगे नहीं बढ़ेंगे और बार-बार जोड़ने और गुणा करवाने का अभ्यास करवाते रहेंगे। समझने की प्रक्रिया में सीखने वाले की सोच का ढाँचा बहुत से टुकड़ों के एकत्रित होने से बनता है। इसका अर्थ यह हुआ कि सिखाने के प्रयास में ऐसे अभ्यास होने चाहिए जिनमें एक मोटी क्रमिकता भी हो और इसी के साथ-साथ ही अभ्यासों का, गतिविधियों का एक ऐसा व्यापक सम्मिश्रण हो जो इस क्रमबद्धता को तोड़ता हो और अवधारणाओं के अभ्यास में आगे-पीछे और ऊपर-नीचे जाता हो।

कहने का तात्पर्य यह नहीं है कि कक्षा में करने के लिए खेलों या गतिविधियों का चुनाव अकारण या अटकलपच्चू ढंग से हो और उसमें किसी प्रकार के चुनाव की ज़रूरत नहीं

है। इसके विपरीत यह चुनाव बहुत ही ध्यान से किया जाना चाहिए। सिर्फ़ कुछ जगहों की परिस्थिति के आधार पर सब जगहों के लिए वाजिब चुनाव नहीं किया जा सकता। हर शाला के लिए इसे समय-समय पर शिक्षक द्वारा किया जाना चाहिए। चुनाव करने में बच्चों की रुचि का ध्यान रखने के साथ-साथ उस समय उन बच्चों के सीखने के लिए आवश्यक अनुभव देने की दृष्टि से भी गतिविधियाँ ली जानी चाहिए।

ऐसी कौन-सी गतिविधियाँ, सवाल व पहेलियाँ हो सकती हैं जो बच्चों को रोचक और चुनौतीपूर्ण तो लगे लेकिन अत्यधिक मुश्किल और अग्राह्य न हों, यह चुनाव आवश्यक है।

गणित सीखते-सीखते यदि बच्चे गणित से डरने लग जाएँ और उसे एक अरुचिपूर्ण, अग्राह्य बात मानने लगें तो ऐसे गणित सीखने का कोई विशेष अर्थ नहीं बचता। हमारा मानना है कि अंकों, संख्याओं, आकृतियों आदि से खेलना, उनसे संबंधित नियमों को मानसिक खेल के रूप में इस्तेमाल करने में रूचि रखना गणित सीखने का एक अनिवार्य हिस्सा माना जाना चाहिए। गणित सिखाने को कक्षा व परीक्षा में सवाल हल कर पाने तक नहीं सीमित किया जा सकता।

❑❑❑